भेजे में भाषा का उपकरण? मामला संगीन है

ए.के. जयसीलन

विद्या भवन में 15–16 अप्रैल 2004 को ज्ञान का निर्माण विषय पर सेमीनार का आयोजन किया गया था। इस सेमीनार में ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में अवधारणाएं कैसे बनती हैं, भाषा में कैसे अंकित होती हैं, भाषा किस तरह हमारी अवधारणाओं को संरचना देती है, जैसे मुद्दों पर समझ साझा करने के प्रयास किए गए। इसी संदर्भ में सेमीनार में भेजे में भाषा के उपकरण के बारे में गहराई से पड़ताल करता यह पर्चा।



मैं करूंगा यह कि सबसे पहले भाषा की प्रकृति के बारे में चंद बुनियादी दावों का एक खाका खींचूंगा जिन्हें चौम्स्की शुरुआती बिंदु मानते हैं। आपमें से कुछ लोगों को इनके बारे में कुछ पता होगा। सबसे पुराने विचारों में से एक यह है जिसे वे आज भी दोहराना नहीं भूलते मनुष्यों के पास भाषा नामक कोई चीज़, जो प्रजाति-विशिष्ट लगती है, कैसे है, इसे समझने की शुरुआत हम तभी कर सकते हैं जब हम भाषा के अर्जन और भ्रूण में भुजाओं के विकास जैसी कुछ शारीरिक घटनाओं के बीच सादृश्य स्थापित कर सकें। आप जानते हैं कि मां की कोख में बच्चे के विकास में एक अवस्था आती है जब उसमें कुछ उभार बनते हैं जो आगे चलकर भुजाएं बन जाते हैं। उसमें कुछ मांसल रचनाएं उभरती हैं, जो हृदय, फेफड़े वग़ैरह बनती हैं। ये सब जैविक घटनाएं हैं और चौम्स्कीयाना भाषा वैज्ञानिकों का दावा है कि भाषा अर्जित करना एक जैविक घटना है और जन्म के समय मनुष्य की संतान में इसके परिपथ

तैयार होते हैं; मस्तिष्क पहले से ही भाषा अर्जित करने के लिए तैयार होता है। मस्तिष्क में भाषा के विकास के लिए न्यूनतम शर्त एक चिंगारीनुमा उद्दीपन है - आपको किसी उद्दीपन की चिंगारी की ज़रूरत होती है। उदाहरण के लिए, यदि मनुष्य का बच्चा, जो भाषा की क्षमता के साथ पैदा हुआ है, की परवरिश भाषा से किसी भी तरह के संपर्क से अलग-थलग की जाए तो हो सकता है कि यह संकाय कभी विकसित न हो और शायद आगे चलकर यह बच्चा कभी भी भाषा अर्जित न कर सके। मगर यदि परिस्थिति ऐसी है जहां बच्चे के पास भाषा के कच्चे माल का इनपुट है, तो बच्चा भाषा अर्जित कर लेता है और भाषा का यह अर्जन पूरी मानव प्रजाति में लगभग एकरूप होता है, इसका बुद्धि जैसी किसी चीज़ से कोई लेना-देना नहीं होता। इसलिए हम कहते हैं कि यह एक जैविक घटना है। जिस तरह से इन्सान का कोई भी बच्चा, बशर्ते कि वह जिनेटिक विकृति से ग्रस्त न हो, हाथ-पैरों और हृदय और ऐसी सब चीज़ों के साथ पैदा होता है, उसी तरह न्यूनतम चिंगारीनुमा उद्दीपन मिलने पर सारे मनुष्य भाषा अर्जित कर लेते हैं। भाषा का यह अर्जन एक बार शुरू हो जाने के बाद एक स्व-निर्देशित व आंतरिक रूप से निगरानीशुदा प्रक्रिया है। बाहर से हम ज़्यादा कुछ नहीं कर सकते, पालक या शिक्षक इस प्रक्रिया में मदद या रुकावट पैदा नहीं कर सकते। और आपमें से कई लोगों को यह बात पहले से पता होगी। भाषा अर्जन का यह नज़रिया तथाकथित नैसर्गिकता परिकल्पना का मूल विचार है। तो यह पहला विचार है कि कैसे भाषा या एक मायने में भाषा हासिल करने की क्षमता के सूत्र तैयार होते हैं। मानव भाषा की जैविक बुनियाद का यह दावा चौम्स्की जैसे व्यक्ति के लिए बहुत उपयोगी साबित हुआ क्योंकि यह स्वाभाविक रूप से एक अन्य दावे, एक सार्वभौमिक व्याकरण के दावे, के साथ फिट हो गया। वैसे सार्वभौमिक व्याकरण की धारणा की उत्पत्ति चौम्स्की से नहीं हुई थी। बल्कि दार्शनिक लोग लंबे समय से इस बात पर विचार कर रहे थे कि एक गहरे अमूर्त अर्थ में सारी मानव भाषाओं में एक-सा पैटर्न नज़र आता है।

चौम्स्की से पहले दार्शनिकों ने एक सार्वभौमिक व्याकरण की धारणा का विकास इस तरह की धारणाओं के आधार पर करने का प्रयास किया था कि भाषा में शब्दों का क्रम दिमाग़ में विचारों के क्रम का अनुगामी होता है। यदि यह सही है तो इसका स्वाभाविक मतलब होगा कि सभी इन्सान एक-सा सोचते हैं। लिहाज़ा भाषाओं की संरचना एक-सी होनी चाहिए। मगर कुछ दार्शनिकों द्वारा अख़्तियार किया गया यह रास्ता बहुत फलदायी नहीं रहा क्योंकि वे विचारों के क्रम की धारणा में ज़्यादा ठोस तथ्य नहीं जोड़ पाए। और चौम्स्की ने किया यह है कि इसे दार्शनिक अटकलबाज़ी से दूर ले गए और एक आनुभविक आधार प्रदान किया।

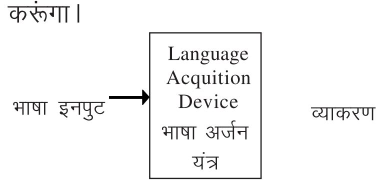
तो यह है दूसरा विचार। मैंने जो पहला विचार प्रस्तुत किया था वह नैसर्गिकता परिकल्पना का था। दूसरा विचार है सार्वभौमिक व्याकरण का यानी एक व्याकरण है जो सारी मानव भाषाओं के मूल में है। मुझे यक़ीन है कि आप इससे मतभेद ज़ाहिर करेंगे, हम इस पर फिर लौटेंगे। चौम्स्की पूर्ववर्ती दार्शनिक परंपरा से एक और मायने में, मानव मस्तिष्क की प्रकृति के अपने नज़रिए में भी अलग हटे थे। आप जानते ही हैं कि मस्तिष्क की प्रकृति में इन्सानों की रुचि हमेशा से रही है। दार्शनिक लोग युगों से इस सवाल पर बहस करते आ रहे हैं और फिर भी शायद यह कहना उचित ही होगा कि इस सवाल में गहरी दिलचस्पी के बावजूद दार्शनिकों ने मानव मस्तिष्क को समझने में कोई ख़ास तरक़्क़ी नहीं की क्योंकि दार्शनिकों का हठ था कि वे मस्तिष्क को एक इकाई यानी एक ही वस्तु के रूप में देखेंगे।

आप एक समांतर स्थिति की कल्पना भी कर सकते हैं। इसीलिए मानव मस्तिष्क को समझने की दिशा में आगे बढ़ना इतना कठिन है। यदि आप इसे एक इकाई के रूप में देखते हैं तो आप कह रहे हैं कि दिमाग़ में बुद्धि नामक कोई चीज़ है जिसे समझा नहीं गया, और चूंकि उसमें बुद्धि है, इसलिए वह वे तमाम चीज़ें कर लेता है जो हम मानते हैं कि दिमाग़ करता है, जैसे अनुभूति से प्राप्त सूचनाओं का प्रोसेसिंग, तार्किक चिंतन, याद रखना, भाषा का अर्जन और उपयोग, और विभिन्न अन्य बातें। ऐसा माना जाता है कि दिमाग़ ये सारी चीज़ें बुद्धि नामक किसी चीज़ की बदौलत करता है जिसे किसी ने आगे समझा नहीं है।

अब आप एक समांतर स्थिति की कल्पना कीजिए जिसमें एक समुदाय है जिसने कभी मानव शरीर की चीरफाड़ नहीं की है और कभी यह नहीं देखा है कि मानव शरीर अंगों से मिलकर बना है। चूंकि उस समुदाय ने जीवित होना नामक

गुण को भलीभांति समझा नहीं है, इसलिए वह मानव शरीर को एक अविभेदित पिण्ड के रूप में देखने पर अड़ा है, जो वे सारे काम करता है जो मानव शरीर को करने चाहिए, जैसे भोजन को पचाना, धड़कना, पसीना निकालना, और वे सारे काम जो मानव शरीर करता है। अब यह समुदाय, जिसने कभी मानव शरीर को चीरफाड़ करके देखा नहीं है और यह समझा नहीं है कि वह अंगों से मिलकर बना है, जिनके अपने-अपने कार्य हैं, हालांकि ये अंग एक-दूसरे से अंतर्क्रिया करते हैं और ये अंग ऐसे हैं कि प्रत्येक अंग अपनी विशिष्ट जैव रासायनिक क्रियाओं द्वारा संचालित होता है, वह समुदाय मानव शरीर को समझने की शुरुआत भी नहीं कर सकता। मानव मस्तिष्क को लेकर हम इसी स्थिति में थे। अब हम चौम्स्की द्वारा नए रास्ते पर उठाए गए क़दम से लैस हैं मगर इस मामले में भी वे इस विचार के जनक नहीं हैं। ऐसे कई समकालीन भेजा (brain) अध्ययन, भेजा अनुसंधान चल रहे थे जिनसे पता चल रहा था कि हमारे कई दिमाग़ी कार्य भेजे में स्थान विशेष से जुड़े हैं यानी स्थानबद्ध हैं; भेजे के कुछ ख़ास हिस्से हैं जहां दृष्टि का प्रोसेसिंग होता है, कुछ ख़ास हिस्से हैं जहां किसी और चीज़ का प्रोसेसिंग होता है वग़ैरह। तो इस तरह के अनुसंधान के नतीजे आ रहे थे और इसके परिणामस्वरूप और इसे आगे बढ़ाते हुए चौम्स्की ने दिमाग़ का मॉड्यूलर नज़रिया अपनाया। यह तीसरा विचार है जो मैं प्रस्तुत करना चाहता था। दिमाग़ का मॉड्यूलर नज़रिया जिसके मुताबिक मानव मस्तिष्क एक अविभेदित इकाई नहीं है बल्कि मॉड्यूल्स से मिलकर बना है। शरीर के अंगों के समान हर मॉड्यूल एक तरह से स्वतंत्र है मगर (अन्य मॉड्यूल्स के साथ) अंतर्क्रिया करता है।

तो ये तीन विचार हैं, नैसर्गिकता परिकल्पना, सार्वभौमिक व्याकरण का विचार, और तीसरा मस्तिष्क की मॉड्यूलर संरचना। ये तीन विचार एक-दूसरे से अंतर्क्रिया करते हुए एक सुसंगत समष्टि बनाते हैं। अब यदि मानव मस्तिष्क मॉड्यूल्स से बना है, तो चौम्स्की यह कह सकते हैं कि एक मॉड्यूल है जो भाषा के प्रति, भाषा के अर्जन के प्रति समर्पित है और यह इकाई, सार्वभौमिक व्याकरण नामक यह अमूर्त चीज़ कहां स्थित है? वे कहेंगे कि यह भाषा संकाय (faculty of language) में स्थित है जो मानव मस्तिष्क का एक मॉड्यूल है। तो वे सार्वभौमिक व्याकरण को भेजे के उस हिस्से के गुणधर्मों में, उसके परिपथों में स्थानबद्ध कर पाए जो भाषा को समर्पित है, जिसे भाषा संकाय कहते हैं। तो यह थी मानव भाषा की प्रकृति से सम्बंधित चोम्स्की के भाषा वैज्ञानिक विचारों की पृष्ठभूमि। अब मैं भाषा अर्जन के नज़रिए की बात पर आता हूं। यहां मैं ब्लैक बोर्ड का उपयोग करूंगा।



यह सरल सा रेखाचित्र है जो वास्तव में ख़ास कुछ नहीं कहता। बॉक्स का केंद्र LAD है जो Language Acquisition Device यानी भाषा अर्जन साधन का द्योतक है और दावा यह है कि बच्चा भाषा अर्जन साधन के साथ जन्म लेता है, जो भाषा संकाय के तुल्य माना जा सकता है। रेखाचित्र बताता है कि बच्चा भाषा अर्जन साधन के साथ पैदा होता है, परिवेश से भाषा के इनपुट्स प्राप्त करता है और परिणाम के रूप में आउटपुट एक व्याकरण होता है। मसलन, यदि बच्चे को इनपुट के रूप में चीनी भाषा दी जाए तो वह चीनी भाषा का व्याकरण विकसित कर लेगा; यदि हिंदी इनपुट मिले तो हिंदी व्याकरण सामने आएगा।

अब इस चित्र की रोचक बात यह है कि इसके तीन हिस्से हैं। भाषा जो कि इनपुट है; उसके बाद भाषा अर्जन साधन है; और फिर व्याकरण है जो दूसरे छोर पर बाहर निकलता है। और इस प्रक्रिया में प्रेक्षण योग्य हिस्से शुरुआती व अंतिम हिस्से हैं। जैसे आप इस बात का अध्ययन कर सकते हैं कि किसी बच्चे को किस तरह के भाषा इनपुट्स दिए गए। दरअसल, भाषा अर्जन अध्ययन की एक शाखा वह है जिसमें उस भाषा का अध्ययन किया जाता है जिसमें मां अपने बच्चे से बात करती है, जिसे मदरीज़ कहते हैं। तो आप इसका, इनपुटवाले हिस्से का अध्ययन कर सकते हैं, और आप दूसरे छोर से निकलनेवाले उत्पाद - व्याकरण - का भी अध्ययन कर सकते हैं। व्याकरण का अर्जन क्रमिक होता है, शुरू में बच्चा निहायत प्रारंभिक व्याकरण विकसित करता है जो धीरे-धीरे, ज़्यादा इनपुट्स मिलने के साथ, जटिल होता जाता है और अंततः प्रौढ़ व्याकरण हासिल कर लेता है।

आप देख ही सकते हैं कि प्रयुक्त भाषाविज्ञान (एप्लाइड लिंग्विस्टिक्स) के एक हिस्से में इन्सानी बच्चों के

विकासमान व्याकरण का अध्ययन किया जाता है। आप इनपुट सूचना का अध्ययन कर सकते हैं, आप दूसरे छोर से निकले व्याकरण का अध्ययन कर सकते हैं मगर हम यह नहीं देख सकते कि भाषा अर्जन साधन के अंदर क्या हो रहा है। भाषा अर्जन साधन एक ब्लैक बॉक्स ही है और चौम्स्कीयाना भाषा विज्ञानी यह पता करना अपना एक काम मानता है कि फलां-फलां सूचना प्रदान करने पर इस तरह का व्याकरण बाहर निकलता है तो भाषा अर्जन साधन के अंदर क्या हो रहा होगा। यह खुलासा करना भाषाविज्ञानियों का काम है कि भाषा अर्जन साधन के अंदर क्या होता है।

चौम्स्कीयाना दावा यह है कि भाषा अर्जन साधन एक मायने में सार्वभौमिक व्याकरण का साकार रूप है; इस मायने में कि भाषा अर्जन साधन के अंदर सार्वभौमिक व्याकरण के सारे तथाकथित सिद्धांत निहित हैं। बच्चा अपने दिमाग़ में भाषा अर्जन साधन के साथ जन्म लेता है जो एक मायने में शुरू से ही सार्वभौमिक व्याकरण के सारे सिद्धांत जानता है। मगर जब हम इस संदर्भ में जानना शब्द का उपयोग करते हैं - और यह बात ज्ञान का निर्माण विषय पर सम्मेलन में ख़ास तौर से मौजूं है - तो हम एक निश्चित क़िस्म के ज्ञान की बात कर रहे हैं जो भौतिकी या इतिहास या ऐसे ही किसी विषय के हमारे ज्ञान से अलहदा है। यह सहजवृत्ति (instinctive) ज्ञान है, जैसे परिंदों को घोंसला बनाने का ज्ञान होता है। यह सहजवृत्ति ज्ञान भाषा अर्जन साधन में उपस्थित होता है। चूंकि भाषा अर्जन साधन में यह सहजवृत्ति ज्ञान निहित रूप से स्थित होता है, इसे पता होता है कि मानव भाषा में कतिपय क़िस्म की संक्रियाएं तो जायज़ संक्रियाएं होंगी और इसके विपरीत कुछ क़िस्म की संक्रियाएं जायज़ नहीं होंगी। यह हममें पैदाइशी है, यह ज्ञान। इस मुक़ाम पर मैं आपको कुछ उदाहरण देना चाहूंगा।

चौम्स्की ने एक शुरुआती दावा यह किया था कि मानव भाषा का एक विशेष गुण यह है कि इसमें सारी वैयाकरणिक संक्रियाएं ढांचा-आश्रित हैं, इसका मतलब है कि इन संक्रियाओं को एक सोपानबद्ध ढांचे में स्थिति के आधार पर परिभाषित या व्यक्त किया जा सकता है न कि अन्य गुणधर्मों, उदाहरण के लिए, किसी रैखिक ृंखला में स्थिति के रूप में। तो आप ऐसी संक्रियाओं के बारे में सोच सकते हैं जो स्थिति और रैखिक ृंखला पर निर्भर हैं। जैसे आप व्याकरण का एक नियम सोच सकते हैं जो दर्पण प्रतिबिंबनुमा संक्रिया है। कोई दर्पण प्रतिबिंब संक्रिया कैसे चलती है? अर्थात यदि शब्दों की एक ृंखला क,ख,ग पर यह नियम लागू करके नतीजा ग,ख,क निकले, तो यह दर्पण प्रतिबिंब संक्रिया है। या आप व्याकरण के किसी ऐसे नियम की कल्पना कर सकते हैं जिसमें किसी ृंखला के सम व विषम स्थानवाले शब्दों की अदला-बदली की जाती है। यानी इसमें सम संख्यावाली स्थिति के हरेक शब्द की अदला-बदली विषम संख्या स्थितिवाले हर शब्द से की जाएगी। अब सिद्धांततः तो ये सभी संभव संक्रियाएं हैं, मगर मानव भाषा में ये संक्रियाएं कभी नहीं होतीं। हालांकि ये गणितीय संक्रियाएं निहायत आसान हैं और शायद अवधारणा के लिहाज़ से बहुत सरल होंगी मगर मानव भाषा में इनका उपयोग कभी दिखाई नहीं देता। मानव भाषा तो मात्र ढांचा-आश्रित नियमों, ढांचा-आश्रित संक्रियाओं का उपयोग करती है। इसके परिणाम क्या होते हैं? मैं दो-तीन वाक्य ब्लैक बोर्ड पर लिखता हूं।

1क) जॉन तैर सकता है। (John can swim.)

1ख) क्या जॉन तैर सकता है? (Can John swim?)

2क) लड़का तैर सकता है। (The boy can swim.)

2ख) लड़का है सकता तैर। (*Boy the can swim.)

कल्पना कीजिए कि अंग्रेज़ी सीख रहा मानव शिशु वाक्यों की पहली जोड़ी के संपर्क में आता हैः 'John can swim' और इसका प्रश्नवाचक जोड़ीदार 'Can John swim?'। सरसरी तौर पर देखने से नियम यह लगता है कि अंग्रेज़ी में प्रश्न बनाने के लिए दूसरा शब्द उठाकर पहले के स्थान पर रख दो, यानी पहले और दूसरे शब्दों की अदला-बदली कर दो। यह गणितीय क़िस्म की संक्रिया होगी। मगर मानव शिशु यह परिकल्पना कभी नहीं बनाता। दरअसल, इस तरह की जानकारी मिलने पर बच्चा कहीं अधिक जटिल परिकल्पना बनाता है - "मेरी भाषा में एक नियम है जिसमें प्रथम सहायक क्रिया को उठाकर उसे कर्ता संज्ञा पद के बाईं ओर रख देते हैं।" - जहां सहायक क्रिया, कर्ता संज्ञा पद वग़ैरह धारणाओं को स्थिति व ढांचे, सोपानबद्ध ढांचे और श्रेणियों के लिहाज़

से परिभाषित किया जाता है। ये निहायत पेचीदा धारणाएं हैं मगर फिर भी बच्चा वाक्य के पहले और दूसरे शब्दों की अदला-बदली के अत्यंत सरल नियम की बजाय जटिल नियम को चुनता है। नतीजतन जब बच्चे का संपर्क 'The boy can swim' जैसे वाक्य से होता है तो वह प्रश्न बनाते हुए 'Boy the can swim' जैसा वाक्य बनाने की ग़लती कभी नहीं करता। यह एक ऐसी ग़लती है जो कोई बच्चा, यहां तक कि दूसरी भाषा सीख रहा बच्चा, भी कभी नहीं करता। अर्थात कुछ ऐसी संक्रियाएं हैं जिन्हें शुरू से ही बाहर कर दिया जाता है क्योंकि हम जानते हैं कि मानव भाषा में किस तरह की संक्रियाएं हो सकती हैं और यह ज्ञान सहजवृत्ति ज्ञान है जो भाषा अर्जन साधन में अंतर्निर्मित.ा है।

अब हम जानते हैं कि भाषा इनपुट से संपर्क होने पर मानव शिशु अपनी भाषा का व्याकरण जल्दी ही विकसित कर लेता है। यह बहुत तेज़ी से होता है। और भाषा का अर्जन काफ़ी तेज़ व आसान लगता है और यह बात सार्वभौमिक व्याकरण की प्रकृति तथा भाषा अर्जन साधन की प्रकृति की ओर संकेत करती है। इससे पता चलता है कि सार्वभौमिक व्याकरण तथा भाषा अर्जन साधन द्वारा अनुमतिशुदा संक्रियाएं बहुत थोड़ी सी और बहुत सीमित होनी चाहिए। यह निष्कर्ष कहां से निकला? मान लीजिए कि एक व्याकरण है जो दस क़िस्म की संक्रियाओं की इज़ाजत देता है और एक अन्य व्याकरण है जो मात्र तीन किस्म की संक्रियाओं की इज़ाजत देता है। मैं व्याकरण के नियमों की बात नहीं कर रहा हूं। मैं संक्रियाओं के प्रकारों की बात कर रहा हूं। अब जिस व्याकरण में दस किस्म की संक्रियाओं की इज़ाजत है, जब बच्चे को अपनी मां से सूचना इनपुट मिलता है, जिसका विश्लेषण करके उसे उसका ढांचा अर्जित करना है। ढांचे का यह समूचा अर्जन अंतर्निर्मित सिद्धांतों के अनुसार अचेतन मस्तिष्क द्वारा किया जाता है। अब दस संक्रियाओंवाले पहले व्याकरण में बच्चे को इस जानकारी का विश्लेषण दस अलग-अलग ढंग से करके उसमें से सही विकल्प चुनना होगा। जिस व्याकरण में मात्र तीन क़िस्म की संक्रियाएं हैं, उसमें बच्चे को इस जानकारी का विश्लेषण मात्र तीन तरह से करना होगा। अर्थात् किसी भी भाषा के व्याकरण में यदि बड़ी संख्या में संक्रियाओं की छूट है तो बच्चे का काम अपेक्षाकृत कठिन होगा जबकि एक ऐसी भाषा में बच्चे का काम अपेक्षाकृत आसान होगा, जिसके व्याकरण सिद्धांत में कम संक्रियाओं की अनुमति है। तथ्य यह है कि ऐसा लगता है कि दोनों बच्चों का काम आसान है। इससे पता चलता है कि सार्वभौमिक व्याकरण बहुत थोड़े क़िस्म की संक्रियाओं की अनुमति देता है। मैं समझता हूं बात स्पष्ट हो गई होगी।

भाषाविज्ञानियों के सामने अब क्या काम है? हम नहीं जानते कि सार्वभौमिक व्याकरण वाकई किस तरह की संक्रियाओं की अनुमति देता है। दरअसल हम नहीं जानते कि भाषा अर्जन साधन के अंदर होता क्या है और यह पता करना हमारा एक काम है। चौम्स्कीयाना भाषाविज्ञानियों का मत है कि भाषा सिद्धांत में जितनी कम संक्रियाओं की अनुमति होगी, व्याकरण उतना ही अच्छा होगा। 'आस्पेक्ट्स ऑफ दी थ्योरी ऑफ सिंटैक्स' (1965) में जब चौम्स्की कहते हैं कि दुर्बलतम सिद्धांत सर्वोत्तम सिद्धांत होता है तो उनका आशय यही है। दुर्बलतम सिद्धांत से उनका आशय ऐसे सिद्धांत से है जिसमें संक्रियाओं, अनुमतिशुदा संक्रियाओं, की संख्या सबसे कम हो। सशक्त सिद्धांत वह है जिसमें ज़्यादा क़िस्म की संक्रियाएं हों, दुर्बल सिद्धांत वह है जिसमें संक्रियाओं की संख्या कम हो। और हमारा लक्ष्य सदैव दुर्बलतम सिद्धांत होना चाहिए, शर्त यह है कि वह अनुभवों को अपने दायरे में समेट ले। अर्थात् उस सिद्धांत में मानव भाषा के सारी प्रेक्षित, वास्तविक जानकारी का विवरण होना चाहिए। मगर हमें यह काम यथासंभव कम से कम क़िस्म की संक्रियाओं के साथ करने की कोशिश करनी चाहिए।

अब आप जानते हैं कि पाणिनि के बाद और शायद पहले के व्याकरणविदों में भी व्याकरण में सरलता की एक धारणा मौजूद थी। हम अक्सर इस रूप में सोचते हैं कि एक व्याकरण की तुलना में दूसरे व्याकरण में कितने नियम हैं। यदि व्याकरण 'क' एक भाषाई परिघटना का वर्णन आठ नियमों की मदद से करे और व्याकरण 'ख' उसी परिघटना का वर्णन मात्र एक नियम से कर दे तो व्याकरण 'ख' को बेहतर व्याकरण माना जाता है। जब भी हम व्याकरण की सरलता की बात करते हैं तो प्रवृत्ति हमेशा नियमों की संख्या के लिहाज़ से सोचने की होती है। मगर सरलता का एक और अपेक्षाकृत गहरा अर्थ है जिसे ध्यान में रखना चाहिए,

मतलब एक व्याकरण कितनी क़िस्म की संक्रियाओं की छूट देता है जो दूसरा व्याकरण नहीं देता। और मुझे लगता है कि सरलता की सचमुच महत्त्वपूर्ण बात वह है जो यह कहती है कि किसी भाषाई सिद्धांत में कितनी क़िस्म की संक्रियाओं का सहारा लिया गया है, ज़ोर नियमों की संख्या की बजाय क़िस्मों की संख्या पर है।

अब इस सबका शिक्षकों से क्या वास्ता? मेरे ख़्याल से भाषा की प्रकृति और भाषा अर्जन की प्रकृति को लेकर इस चौम्स्कीयाना नज़रिए ने एक महत्त्वपूर्ण काम यह किया है कि बिम्बों में एक बुनियादी बदलाव ला दिया है। आपमें से ख़ासकर पुराने शिक्षकों को याद होगा कि अंग्रेज़ी या कोई भाषा उसकी संरचनाओं के रूप में सिखाई जाती थी। यानी विचार यह था कि किसी भी भाषा को संरचनाओं और शब्दों के रूप में विभक्त किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, जैसे कक्षा 3 की पाठ्यपुस्तक में हम फलां-फलां संरचना और इतने शब्द सिखाएंगे और ये संरचनाएं रेखीय ढंग से (एक के बाद एक) सिखाई जाएंगी। यानी पाठ 1 में एक संरचना सिखाई जाएगी, पाठ 2 में शायद उस संरचना को दोहराया जाएगा और शायद एक और संरचना जोड़ी जाएगी। उन दिनों में भाषा शिक्षण का यही आदर्श स्वरूप था। सीखने और सिखाने के परस्पर सम्बंधों की एक सरल समझ थी। सोच यह था कि जो सिखाया जाता है, वही सीखा जाता है। शिक्षण के पुराने सोच में सिखाने और सीखने के बीच एक सीधा सम्बंध था और उसी के अनुरूप इस बात को लेकर भी एक सरल सोच था कि जब कोई चीज़ सीखी जाती है तो सीखनेवाले के दिमाग़ में क्या चलता है। संरचना सूची के पीछे विचार यह था कि हर संरचना एक आदत है, एक किस्म की तेज़ पुनरावृत्ति है। भाषा शिक्षण का यह चित्र, इसके लिए जो बिम्ब आप सोच सकते हैं वह था कोई इमारत या दीवार बनाने का। यही तो आप करते हैं, एक ईंट के ऊपर दूसरी और उसके ऊपर तीसरी रखते हैं वग़ैरह। दीवार चुनने का यह बिम्ब संरचनावादी भाषा शिक्षण के लिए एकदम सही रूपक था। इस बिम्ब को अब ख़ारिज़ कर दिया गया है और इसका स्थान हाथ-पैरों के विकास के चौम्स्कीयाना बिम्ब ने लिया है, यानी भाषा उपयुक्त हालात में विकसित होती है। मगर यह प्राकृतिक विकास है, और इस बात का शिक्षण पर क्या असर होगा? मेरा ख़्याल है कि आपमें से कुछ भाषा शिक्षक स्टीफन क्रेशन के काम से वाकिफ़ होंगे। स्टीफन क्रेशन ने एक किताब लिखी है, इनपुट हायपोथीसिस और इस छोटी सी किताब के अंतिम पैरा में वे एक दिलचस्प बात कहते हैं। वे कहते हैं कि मान लीजिए कि अमरीकी स्कूलों में आपको अचानक प्रांत के शिक्षा अधिकारी का निर्देश मिलता है कि कक्षा 8 के बच्चों को एक निश्चित कद, जैसे 5 फुट 8 इंच या ऐसा ही कुछ, हासिल कर लेना चाहिए। और जैसे ही यह निर्देश मिलता है सारे शिक्षक अपने छात्रों को नापना शुरू कर देते हैं और कुछ बच्चे इस ऊंचाई तक पहुंच चुके हैं, कुछ इससे अधिक हैं और कुछ बदकिस्मत बच्चे वांछित क़द से कम हैं। तो ऐसी परिस्थिति में शिक्षक उन बच्चों के लिए क्या कर सकता है जिनका क़द ज़रूरी क़द से कम है? शिक्षक यही कर सकता है कि उन्हें तानकर लंबा कर दे, जो दर्दनाक़ भी होगा और बेकार भी। क्रेशन का कहना यह है कि कद की तरह भाषा का ज्ञान भी शिक्षक के प्रत्यक्ष हस्तक्षेप के योग्य नहीं है। ऐसी स्थिति में (यदि पहले पता होता कि ऐसा फतवा आनेवाला है) शिक्षक यही कर सकता था कि उससे पहले के तीन-चार वर्षों में छात्रों की खुराक और व्यायाम पर नियंत्रण रखता ताकि वे निर्देशित ऊंचाई स्वाभाविक तौर पर हासिल कर लें।

इसके अलावा शिक्षक कुछ नहीं कर सकता था। इसी प्रकार से शिक्षक प्रत्यक्ष तौर पर छात्रों को भाषा सिखाने के लिए कुछ नहीं कर सकता। शिक्षक यही कर सकता है कि बच्चे को एक अनुकूल माहौल में रखे ताकि भाषा अर्जन साधन चालू हो जाए और उसे मदद मिले और स्वतः वह व्याकरण विकसित करे जो शिक्षक सिखाना चाहता है। अर्थात् अब हो यह रहा है कि सिखाने और सीखने के बीच सम्बंध परोक्ष है। यह एक प्रत्यक्ष सम्बंध हुआ करता था, अब यह एक परोक्ष सम्बंध है। ज़रूरी नहीं कि भौतिकी या गणित पढ़ाने में भी यह सम्बंध परोक्ष हो, मगर एक क़िस्म के ज्ञान, उस क़िस्म का ज्ञान जिसे हम भाषा का ज्ञान कहते हैं, के मामले में यह सम्बंध परोक्ष ही रहना होगा।

ए.के. जयसीलन : सी आई ई एफ एल, हैदराबाद में कार्यरत हैं।